Gyanvividha, Vol.-2; Issue-3 (July-Sept.) 2025 : PP-311-316

ज्ञानविविधा

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-2.25
Vol.-2; Issue-3 (July-Sept.) 2025
Page No.- 311-316
©2025 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

पैड़ाला रवींद्रनाथ
शोधार्थी,
श्री वेंकटेश्वरा विश्वविद्यालय,
तिरुपति, आँध्रप्रदेश.

Corresponding Author :

पैड़ाला रवींद्रनाथ
शोधार्थी,
श्री वेंकटेश्वरा विश्वविद्यालय,
तिरुपति, आँध्रप्रदेश.

तीसरी आँख : यथार्थ के धरातल पर

सार : हिंदी साहित्य में उपेक्षित समाज को दिखाने के लिए एक आँख चाहिए। यह काम दलित साहित्य के द्वारा ही संभव हो पाया है। तीसरी आँख डॉ. जयप्रकाश कर्दम के आलेखों के संग्रह का नाम है। एक सौ उनसठ पृष्ठों की इस पुस्तक में दस आलेख हैं। समकालीन प्रकाशन के द्वारा वर्ष 2022 में प्रकाशित हुआ है। ये लेख अलग – अलग समय में लिखे गये हैं और विभिन्न पत्र – पत्रिकाओं में प्रकाशित भी हो चुके हैं। 'तीसरी आँख' संग्रह न केवल प्रतीक मात्र है बल्कि एक वैचारिक उपकरण है। इसमें कटु आलोचना का संचार है। लेखक को समाज के उन पहलुओं को देखने में सक्षम बनाता है जिन्हें सामान्य दृष्टि से देखी नहीं जाती। हिंदी साहित्य में दलित विमर्श, श्रमिक जीवन, आत्मकथा, स्त्री अनुभव जैसे उपेक्षित समाज के विषय लंबे समय तक उपेक्षित रहा है। तीसरी आँख वह है जो न केवल देखती है बल्कि सवाल करती है और सोचने को मजबूर करती है।

बीज शब्द : समाज, दलित, रचनाकार, दृष्टि, संघर्ष, शोषण, असमानता, चेतना।

"तीसरी आँख" दलित साहित्य के वरिष्ठ रचनाकार डॉ. जयप्रकाश कर्दम के आलेखों के संग्रह का नाम है। एक सौ उनसठ पृष्ठों की इस पुस्तक में दस आलेख हैं। समकालीन प्रकाशन के द्वारा वर्ष 2022 में प्रकाशित हुआ है। ये लेख अलग – अलग समय में लिखे गये हैं और विभिन्न पत्र – पत्रिकाओं में प्रकाशित भी हो चुके हैं। इस बात का उल्लेख स्वयं लेखक ने आमुख में निवेदन के रूप में व्यक्त किया है। उनका यह आशय है कि इन आलेखों के आधार पर साहित्य की संवेदना और सरोकारों का मूल्यांकन हो सकें। भारतीय साहित्य में और उसके इतिहास में दलित समाज और दलित साहित्यकार उपेक्षित हुए हैं। आज दलित विमर्श हिंदी साहित्य में सबसे महत्वपूर्ण विमर्श है। दलित

साहित्य की अपनी अलग दृष्टि है। यह साहित्य में क्रांति की वह अलग धारा है, जिसकी अपनी अलग दृष्टि है। यही क्रांतिकारी तीसरी आँख हमें डॉ. जयप्रकाश कर्दम की रचनाओं में देखी जाती है।

साहित्य सामाजिक जीवन से जुड़ा हुआ होता है। सामाजिक जीवन से जुड़े रहना साहित्य का आवश्यक तत्व है। समाज में जो कुछ चलता है उसकी अभिव्यक्ति साहित्य के माध्यम से होता है। इसलिए साहित्य को समाज का दर्पण कहा जाता है। साहित्यकार समाज का द्रष्टा है। साहित्यकार की दृष्टि साधारण जनता की दृष्टि से अलग होती है। वह जो कुछ अपनी आँखों से देखता है उसी की अभिव्यक्ति अपनी रचना के माध्यम से अभिव्यक्त करता है, साथ ही साथ वह कई बातों को अपने ढंग से टीका, समीक्षा, भाष्य, विवरण, व्याख्या, समालोचना, वृत्त विवरण भी करता है। साहित्य और उसके इतिहास का मुद्दा बहुत बड़ा व्यापक होता है। बहुत प्राचीन काल से भारतीय समाज में साहित्य को धर्म की दृष्टि से देखने की परंपरा है। धर्म के बिना उसका कोई मूल्य ही नहीं है। जिसका आधार वेद, पुराण, उपनिषद, रामायण, महाभारत, भगवद्गीता आदि हिंदू धार्मिक ग्रंथ हैं। ईश्वर से जुड़े हुए आध्यात्मिक चिंतन एवं दर्शन है। समाज के सभी पक्षों को इसमें कोई स्थान नहीं है। आम जनता की दृष्टि बिल्कुल नहीं है। आधुनिक काल में जो प्रयास हुआ है वह भी नाममात्र का है। साहित्य में दूसरी दृष्टि साम्यवादी है। जिसका आरंभ 1818 ई और उत्कर्ष काल 1883 माना गया है। यह कार्लमार्क्स से प्रभावित एक आलोचना है, एक विचारधारा है। जिसका मुख्य क्षेत्र अर्थ व्यवस्था है। साहित्य को आर्थिक और राजनीतिक संदर्भ में देखने की दृष्टि है। वर्ग संघर्ष, सामाजिक असमानता, सत्ता संरचनाएँ आदि मार्क्सवादी दृष्टिकोण के मुख्य बिंदुएँ हैं। आज भारत के लगभग सभी भाषाओं में साहित्य की तीसरी धारा सामने आयी है। भारतीय साहित्य एक परंपरागत साहित्य है। इसमें वेद, पुराण, शास्त्रों पर आधारित के आधार पर ब्राह्मणवादी दृष्टिकोण प्रमुख रहा है। इसकी संरचना वर्ण – जाति व्यवस्था पर टिकी है। शूद्रों और दलितों को शिक्षा से वंचित रखा गया है। उनकी पीड़ा अनुभवों को साहित्य में कोई भी स्थान नहीं मिला है। आज की दुनिया में दलितों का अपना अलग दृष्टिकोण विकसित हुआ है। यह फुले, बुद्ध और बाबा साहब अंबेडकर की विचारधारा से अनुप्राणित है। यह समाज और साहित्य की तीसरी आँख है, उपेक्षित समाज की आत्माभिव्यक्ति का नाम है। वर्ण व्यवस्था के विरोध में सामाजिक परिवर्तन की क्रांति सबसे पहले बुद्ध से हुई है। उसके बाद आदिकाल में सिद्ध - नाथ कवि, भक्तिकाल में कबीर, रैदास, नामदेव, फुले दलित क्रांति के वाहक थे। आधुनिक काल में निराला, प्रेमचंद, राजेंद्र यादव, नागार्जुन, धूमिल, दूधनाथ सिंह, मुक्तिबोध, त्रिलोचन शास्त्री, गंगा प्रसाद विमल, रमणिका गुप्ता, केदारनाथ अगरवाल जैसे रचनाकारों ने दलितों की मुद्दे पर बहुत कुछ लिखा है। लेकिन उनकी रचनाओं में दलितों पर दया एवं सहानुभूति दिखाई देती है। उनकी रचनाओं में वह तीसरी आँख नहीं है जो दलितों की अस्मिता बचाकर उनमें चेतनालानेवाली हो। इसलिए यह विमर्श भी प्रबल रूप से सामने आने लगी है कि साहित्य में उपेक्षित दलित साहित्यकारों को भी साहित्य के इतिहास में समुचित स्थान मिले, भारतीय साहित्येतिहास का पुनर्निर्माण हो जायें।

डॉ. जयप्रकाश कर्दम जी हिंदी दलित साहित्य का आधार स्तंभ हैं। उनका विचार एवं चिंतन न केवल दलित साहित्य का है बल्कि हिंदी साहित्य के लिए अमूल्य देन है। वे लिखते हैं कि किसी भी वस्तु अथवा विचार को देखने की एवं समझने की दृष्टि सबका एक समान नहीं होती है। हर विचारवान आदमी अपनी दृष्टि से देखता है, उसमें समानता होती है और भिन्नता भी। वस्तु हो या विचार उपयोगिता के आधार पर उसका स्वीकार किया जाता है और आलोचना भी की जाती है। "किसी भी वस्तु अथवा विचार के विषय में कोई एक विचार सर्वमान्य और सार्वभौमिक नहीं होता। विचार कोई भी हो स्वीकार्य वही हो सकता है, जो अपनी उपयोगिता रखता हो।"[1]

आज की दुनिया में उपेक्षित व्यक्ति व समाज को देखने की आँख विकसित हुई है। यह दलित साहित्य

के द्वारा ही संपन्न हुआ है। हिंदी साहित्य में लेखकों की जो उपेक्षित साहित्यिक विधाओं और विषयों को केंद्र में लाकर उनको प्रकाश में लाने का प्रयास लेखक डॉ.जयप्रकाश कर्दम जी ने किया है। यह नयी विमर्शधारा को जन्म देनेवाली है। 'तीसरी आँख' संग्रह न केवल प्रतीक मात्र है बल्कि एक वैचारिक उपकरण है। इसमें कटु आलोचना का संचार है। लेखक को समाज के उन पहलुओं को देखने में सक्षम बनाता है जिन्हें सामान्य दृष्टि से देखी नहीं जाती। हिंदी साहित्य में दलित विमर्श, श्रमिक जीवन, आत्मकथा, स्त्री अनुभव जैसे उपेक्षित समाज के विषय लंबे समय तक उपेक्षित रहा है। तीसरी आँख वह है जो न केवल देखती है बल्कि सवाल करती है और सोचने को मजबूर करती है।

'ब्रह्मराक्षस का मुक्तिबोध' लेख के संदर्भ में लेखक लिखते हैं कि "हिंदी साहित्य में गजानन माधव मुक्तिबोध की बड़ी पहचान कवि के रूप में है और कवि के रूप में ही प्राय: उनका मूल्यांकन हुआ है। उनके आलोचना कर्म पर भी चर्चा हुई है। या यूँ कहिए कि एक कथाकार के रूप में वह उपेक्षित हुए हैं।"[2] गजानन माधव मुक्तिबोध की रचनाओं पर नामवर सिंह, रामविलास शर्मा, सच्चिदानंद हीरानंद वात्सायायन अज्ञेय, कृष्णकुमार, संकर्षण शुक्ला आदि साहित्य इतिहासकारों और समीक्षकों ने कवि के रूप में विशेष रूप से कार्य किया है। लेकिन कहानीकार के रूप में समीक्षा नहीं हो पायी है। उनकी कहानियों में मार्क्सवादी दृष्टिकोण, आत्म संघर्ष, सामाजिक चेतना, सोदर्यानुभूति और जीवनानुभूति का समन्वय दिखाई देता है। कर्दम जी लिखते हैं कि मुक्तिबोध की कहानियाँ जीवन के गहरे यथार्थ – बोध के साथ – साथ मूल्य – बोध की कहानियाँ हैं, जिनमें जीवन के विभिन्न रूप अपने सत्य और मूल्यों के साथ प्रतिबिंबित हुए हैं। असमानता, अन्याय, अनैतिकता, भ्रष्टाचार, आदि अमानवीय विसंगतियों का प्रतिकार तथा असत्य, हिंसा, चोरी, निंदा, कटु – वचन, छल – कपट, ईर्ष्या, द्वेश, लालच, आदि से मुक्त रहकर सत्य, अहिंसा, प्रेम, न्याय, सदाचारण, सद्भाव का पालन करना मनुष्य का गुण और पहचान है और प्रत्येक मनुष्य में इसकी अपेक्षा की जाती है।"[3] मुक्तिबोध की कहानियाँ मध्यवर्गीय प्रगतिशील व्यक्ति की चेतना की सहज अभिव्यक्ति है। इन कहानियों की आलोचना कर्दम जी ने इस प्रकार की है कि "यह मध्यवर्ग हिप्पोक्रेट (पाखण्डी) है। वह सामान्य व्यक्ति होने का दिखावा करता है, जबकि वास्तव में स्वयं के अंदर सामान्य लोगों से श्रेष्ठ होने का भाव रखता है। अभावग्रस्त, कमजोर लोगों के प्रति सहानुभूति प्रकट करता है, किंतु उनके लिए कुछ करने के अवसर दिखावे के लिए थोड़ा – बहुत कुछ करके हाथ पीछे खींच लेता है।"[4] इसमें लेखक का विमर्श है कि ब्राह्मण परंपरा में ब्रह्म – विद्या ही सर्वोच्च स्थान है। ब्राह्मणों द्वारा लिखित समस्त तथाकथित शास्त्रों में ब्राह्मणवाद का प्रदिपादन, पोषण और संरक्षण और प्रसार का प्राधान्य है। शूद्रों को ब्रहम विद्या वर्जित है। जो भी शूद्र उस विद्या को अर्जित न करें। दलितों में कोई भी गुरु न बनें। उनका बहिष्कार एं दंड दिया जाता था। मुक्ति बोध की कहानी 'ब्रह्म राक्षस का शिष्य' ब्राह्मण व्यवस्था को बट्टा लगानेवाली है। लेखक कर्दम जी लिखते हैं कि "बहिष्कार अपने आप में सामाजिक हत्या है। सामाजिक हत्या, शारीरिक हत्या से अधिक कष्टदायक होती है, क्योंकि शारीरिक हत्या में व्यक्ति एक बार हत्या का दर्द सहता है, जबकि सामाजिक हत्या में उसे रोज हत्या के दर्द से गुज़रना पड़ता है। ब्रह्मराक्षस इसी दंश को सहने केलिए विवश है।"[5]

लेखक का दूसरा आलेख है 'सोलह आने का समाजवाद'। यह वासुदेव सिंह उर्फ़ त्रिलोचन शास्त्री का एकमात्र कहानी संग्रह 'देशकाल' है, इसमें बीस कहानियाँ संग्रहीत हैं। जिस तरह मुक्तिबोध की कहानियों की उपेक्षा की गई है उसी तरह त्रिलोचन शास्त्री की भी है। त्रिलोचन शास्त्री जी प्रगतिवादी चेतना के रचनाकार थे। वे घुमक्कड थे। त्रिलोचन शास्त्री जी के बारे में रचनाकार कर्दम जी लिखते हैं कि "सामाजिक संबंधों की गहरी परख है और उन पर उतनी गहरी पकड़ भी है। भिन्न – भिन्न प्रकार के व्यक्तित्व और विचार वाले भूमिहार से लेकर भूमिहीन,

मालिक से लेकर मजदूर, शोषक से लेकर शोषित, सबके जीवन को उन्होंने निकटता से देखा और सभी प्रकार के व्यक्ति उनकी रचनाओं के पात्र हैं।"[6] त्रिलोचन शास्त्री की कहानियों के पात्रों का विश्लेषण करते हुए कर्दम जी ने उनकी सामाजिक चेतना पर प्रकाश डाला गया है। लेकिन उनकी रचनाओं में वर्ण व्यवस्था या जातिवाद से टकराने का कोशिश बहुत कम मिलती है।

'मोचीराम: दर्द, द्वंद्व और स्वप्न' 'तीसरी आँख' का तीसरा लेख है। यह सुदामा पाण्डेय धूमिल की प्रसिद्ध एवं बहु चर्चित कविता 'मोचीराम' है। इसमें मोचीराम के शोषण का चित्रण किया गया है। मोचीराम अंत्यज, अस्पृश्य हैं। जूता बनाना ही उसका काम है। जो कुछ भी उसे दिया जाय उसी को चुपचाप स्वीकार करना पड़ता है। मेहनत की उपयुक्त मजदूर भी उसे नहीं मिलता है। यह न केवल मोचीराम के द्रर्द और दंश है बल्कि यह दलित जीवन की त्रासदी है। उन्हें अपमान को सहनते हुए काम करना पड़ता है। यह उनकी मजबूरी है। कविता में मोचीराम इच्छा से काम नहीं करता है। पेट की भूख उसे यह काम करने को विवश करती है। अभाव और दरिद्रता उसे नारकीय जीवन जीने को बाध्य करती है। वह किसी बात का विरोध नहीं कर पाता। कर्दम जी लिखते हैं कि "सत्ता, संपत्ति पर काबि़ज लोग निम्न और कमज़ोर वर्ग के लोगों को दबाकर रखते हैं और हीनता से देखते हैं। उनकी भूख और गरीबी़ पेट भरे और तमाम स्रोतों पर काबि़ज लोगों के लिए अप्रिय और अनावश्यक विषय है।"[7] कविता में कवि धूमिल ने दलितों के जीवन के □थार्थ एवं जीवन संघर्ष को मोचीराम के माध्यम से सामने लाया है लेकिन इसमें शिक्षा के प्रति जागरूकता और उत्साह का अभाव है। स्वातंत्र्योत्तर काल में देशभर में दलितों की शिक्षा पर बल दिया गया है। दलितों में भी स्वाभिमान की भावना बढ़ रही है। लेखक इस कविता को लेकर कई सवाल उठाये हैं कि मोचीराम में शिक्षा के प्रति जागरूकता क्यों नहीं आया है? वह शोषण का चुपचाप क्यों सहनते आया है? वह अपनी मौजूदा स्थिति के साथ समझौता करता हुआ ही क्यों दिखाई देता है? यह कविता दलितों के लिए न्याय नहीं कर पाती है। दलितों के जातिगत पेशे को और उसकी कुशलता को प्रकाश में लाने से दलितों की उन्नति नहीं हो सकती है। धोबी, पासी, चमार, तेली/खोलेंगे अंधेरे का ताला खोलने के आतुर हैं। शिक्षा दलितों के लिए सबसे बड़ी आवश्यकता है।

रचनाकार कर्दम जी ने 'महाकाल को ललकारता कवि' अपने इस चौथे लेख में केदारनाथ अग्रवाल की कविताओं पर गहन रूप से विचार – विमर्श किया है। केदारनाथ अग्रवाल की कविताएँ दु:खी, पीड़ित मनुष्य को सांत्वाना देती हैं और शोषण के विरुद्ध संघर्ष करने की हौसला बढ़ाती हैं। रोने से समस्या का समाधान नहीं निकलता है उन चुनौतियों का सामना करते हुए आगे बढ़ने से होता है। समाज मनुष्यों से बनता है, परस्पर एक दूसरे सहयोग से चलता है। इसमें आदमी होने के अर्थ को खोजा गया है। कवितात्मक शैली में उसका विश्लेषण किया गया है। मनुष्य और समाज पर यह प्रश्न भी किया है कि "आदमी और आदमियत की खोज कविता का असला धर्म है। विशेष रूप से ऐसे समाज में जहाँ एक धर्म और संप्रदाय के लोग दूसरे धर्म के लोगों को शत्रु की तरह देखते हैं। जहाँ एक आदमी जन्मना जाति के आधार पर स्वयं को दूसरे आदमी से श्रेष्ठ, उच्च और पवित्र समझता है तथा असमानता, ऊँच – नीच और अस्पृश्यता का व्यवहार करता है। इस तरह के सामाजिक व्यवहार के अस्तित्व में रहते क्या समाज को मानवीय समाज और व्यक्ति को मनुष्य कहा सकता है?"[8] इसलिए समाज में हम होने की भावना को विकसित करना है। हर इंसान को सोचने की स्वतंत्रता होने चाहिए। आदमी होने का अर्थ मानव - बोध को उत्पन्न करता है यही एक दूसरे को जोड़ता है। ब्राह्मणवादी परंपरा ने ईश्वर के नाम पर मनुष्य को न केवल अशक्त बना दिया है बल्कि मानसिक गुलाम बना दिया है। इसी मानसिक को पारकर मनुष्य आगे बढ़ने में समर्थ नहीं हो पाया है। केदारनाथ अग्रवाल की कविता की विशेषता पर लेखक लिखते हैं कि दमन, शोषण का सिकार का प्रतिकार तथा दमित –

शोषित की पक्षधरता, अन्याय, असमानता का प्रतिकार तथा न्याय और समानता की पक्षधरता, यही मनुष्यता है। कवि केदारनाथ अग्रवाल की कविता में मनुष्यता का यही बोध दिखाई देता है। मनुष्य होने का अर्थ है कि अपनी शक्ति पर विश्वास करना। धर्म मनुष्य को एक दिसा दिखाता है और साधन संपन्न बनाता है। लेकिन समाज में पुजारी–पुरोहित व्यवस्था ने धर्म को धंधा बना दिया है। लेखक लिखते हैं कि "पुजारी–पुरोहित धंधेबाज बन गए हैं। मंदिर धार्मिक व्यापार केंद्र हैं। देश भर में फैला विशाल मंदिर उद्योग इसका सबसे बड़ा प्रमाण है।"[9] इन धार्मिक क्षेत्रों में कमाई पर अधिक बल दिया गया है और अनैतिक बन गया है। निम्न वर्गों के प्रति भेदभाव, दुत्कार से मानवीय मूल्यों का हनन यहीं से हुआ है। अगर वास्तविक समाज को बनाना है तो मनुष्यता को बचाना है। कवि केदारनाथ की कविताओं में जो सामाजिक चिंतन है, मनुष्य और मानवता की बात है उस पर लेखक कर्दम जी ने सरल शैली में उसका विश्लेषण और विवेचन किया गया है।

'संत रविदास की राम कहानी' सातवाँ लेख है। यह देवेंद्र दीपक का आत्म कथात्मक शैली में लिखा गया उपन्यास है। यह संत रविदास के जीवन का इतिहास है। इसमें रविदास का जीवन और साहित्य की कई बिंदुओं को देखी जाती हैं। कर्दम जी ने इस उपन्यास को लोक जीवन का शास्त्र मानते हैं। रविदास चमार जाति में पैदा होने के कारण ब्राह्मण अध्यापक उसका प्रवेश देने से इनकार करता है। समाज में मनुष्य का गुण और योग्यता से अधिक जाति एवं कुल का महत्त्व है। कर्दम जी लिखते हैं कि "दलितों को आगे बढ़ने से रोकने के लिए, उनकी प्रतिभा का दमन करने के लिए ब्राह्मणों द्वारा कैसे-कैसे हथकण्डे अपनाये गये हैं, कितने प्यार से शालीन और दिव्य शब्दों का इस्तेमाल कर एकलव्य का अंगूठा काटा जाता है, पुस्तक इस पर भी प्रकाश डालती है।"[10] संत रविदास के जीवन से हमें यह बोध मिलता है कि जो कुछ बी हमारे साथ घटित होता है उसमें कोई न कोई अच्छाई छिपी रहती है। वह अच्छाई एक दिन दिन जरूर दिखाई देता है। मनुष्य के अंदर विश्वास को पैदाकर उनमें चेतना का संचार करने में यह लेख सफल होगा। स्वीय अध्ययन और निरंतर परिश्रम से सब कुछ संभव है।

'तीसरी आँख' के नौवाँ लेख 'हाशिये के लोग' है। इसमें गंगा प्रसाद विमल के साहित्य पर लिखा गया है। गंगा प्रसाद विमल मानवीय संवेदना के साहित्यकार हैं, उनकी रचनाओं की विषयवस्तु एक ओर प्रकृति, पहाड़ और गाँव हैं तो दूसरी और नगर और महानगर हैं। विमल जी ने हाशिये की जनता के जीवन को अपनी रचनाओं में प्रतिबिंबित किया है और सामाजिक असमानता, असत्य, अन्याय, शोषण और बेईमानी पर कड़ा प्रहार किया है। भारत का एक समाज ऐसा है वह निम्न जातीय और अस्पृश्यता के कारण समाज की मुख्यधारा से अलग और हाशिये पर रहने लगे हैं। उनको अभावग्रस्त जीवन जीना पड़ता है। चोरी करना, झूठ बोलना पड़ता है। यह उनकी जीने की मजबूरी है। हाशिये का समाज सभ्य समाज से दूर है। समाज की संकल्पना में जो कुछ होता है, उसमें हासिये की समाज का स्थान नहीं है। गंगा प्रसाद विमल की कहानी आत्महत्या के एक पात्र का उद्धरण से हमें यह स्पष्ट होता है कि समाज में सब लोग एक समान नहीं हैं। उनकी कथनी और करनी एक जैसी नहीं है। पर्दे के पीछे अपना मुँह छिपाकर मनुष्य चलते हैं। मनुष्य से हिंस जंतु बेहतर है जो सामने आकर प्रहार करता है। "हाँ, मैं आत्म हत्या कर रहा हूँ, इसलिए कि कोई विकल्प नहीं है। मूल्य, नारे, ईमानदारी और सच्चाई .... ये सब बातें झूठी हैं। जो लोग मूल्यों, ईमानदारी और अच्छाई के झूठ से बँधे नहीं हैं, वे सुखी लोग हैं। भौतिक रुप से संपन्न लोग।"[11] दया, धर्म, ईमानदारी, न्याय, नैतिकता ये सब यथार्थ की बातें नहीं हैं, किताबी बाते हैं। जो पढ़ने, कहने, व सुनने में अच्छी लगती हैं। लेकिन व्यवहारिक धरातल पर इनका कोई मूल्य नहीं है।

रमणिका गुप्ता जी ने दलित साहित्य के लिए महत्वपूर्ण काम किया है। वे वामपंथी आंदोलन के सदस्य रही हैं और वामपंथी विचारधारा में पूरी तरह

रची – बसी हैं। इसी आदर्श में वर्गहीन समाज के सपने को मूर्त रूप देते हुए विजातीय व्यक्ति से विवाह किया है। दलित, आदिवासी और वंचित समुदाय की आवाज़ को राष्ट्रीय स्तर पर ले जाने में उन्होंने विशेष योगदान दिया है। उन्होंने 'दलित हस्तक्षेप', 'दलित चेतना – साहित्यिक सरोकार', 'दलित साहित्य' रचनाओं के माध्यम से दलित जीवन को उनके संघर्षों को और विचारों को साहित्यिक विमर्श का पात्र बनाया है। उनकी रचनाएँ केवल भावात्मक ही नहीं बल्कि सामाजिक चेतना, दलितों के अधिकार, पहचान, आत्म सम्मान की बातों से भरपूर हैं। उन्होंने दलितों में राजनीतिक चेतना लाने का प्रयास भी किया है। धर्म और ईश्वर के नाम पर होनेवाले सामाजिक शोषण के विरूद्ध समाज को जगाने काम किया है। डॉ. जयप्रकाश कर्दम जी ने 'साहस और संघर्ष की महागाथा' के रूप में 'तीसरी आँख' के अंतिम आलेख के रूप में उनके जीवन को और रचनाओं को अभिव्यक्त किया है। आरंभ में ही लेखक लिखते हैं कि "निरंतर सृजनशील और सक्रिय रहनेवाली रमणिका गुप्ता के जीवन की शब्दावली में 'आराम' नाम का शब्द नहीं है। जब देखो तब वह काम में व्यस्त दिखाई देती हैं।"[12] रमणिका गुप्ता ने उपन्यास, कहानी, आत्मकथा, आलोचना सहित कई विधाओं में लेखन किया है। किंतु अधिकतर पुस्तकें कविता में ही हैं। उनकी कविताएँ भूख के ख़िलाफ, भूख फैलाने वालों के ख़िलाफ भूख के संघर्ष का दस्तावेज हैं।

'तीसरी आँख' संग्रह में 'चलता फिरता ड्राकुला', 'अपने-अपने बाइपास', 'जहाँ सब मौरूषी हैं', ऐसे आलेख हैं जो सामाजिक विडंबनाओं को सामने लाकर यथार्थ को दर्शाते हैं। नये समाज की परिकल्पना की ओर संकेत करते हैं। इस संग्रह में लेखक डॉ.जयप्रकाश कर्दम जी ने विभिन्न कालों के रचनाकारों का न केवल परिचय दिया है बल्कि समाज में दलित समाज के दयनीय जीवन की वास्तविकता को दर्शाने का महत्वपूर्ण कार्य किया है। गाँवों से दूर दक्षिण के निचले भाग में दलितों के जीवन को देखने की एक आँख है यह तीसरी आँख। सरल शैली में पठकों को सचेत रहने का एक संकेत भी मिलता है। दीन-दु:खित, हाशिये की जनता का परावलंबन, और पराधीनता के जीवन से मुक्ति का उपाय खोज़ने की ओर ये आलेख प्रेरणा देते हैं।

सन्दर्भ सूची :

1. डॉ. जयप्रकाश कर्दम, तीसरी आँख, समकालीन प्रकाशन, प्लैट नं-02, प्रथम तल, अंसारी मार्केट, दरियागंज, नई दिल्ली – 110002, प्रथम संस्करण-2022, पृष्ठ - 9.
2. डॉ. जयप्रकाश कर्दम, तीसरी आँख, समकालीन प्रकाशन, प्लैट नं-02, प्रथम तल, अंसारी मार्केट, दरियागंज, नई दिल्ली – 110002, प्रथम संस्करण-2022, पृष्ठ – 13
3. वही, पृष्ठ – 15.
4. वही, पृष्ठ – 17.
5. डॉ. जयप्रकाश कर्दम, तीसरी आँख, समकालीन प्रकाशन, प्लैट नं-02, प्रथम तल, अंसारी मार्केट, दरियागंज, नई दिल्ली – 110002, प्रथम संस्करण-2022, पृष्ठ – 20.
6. वही, पृष्ठ – 26.
7. वही, पृष्ठ – 35.
8. डॉ.जयप्रकाश कर्दम, तीसरी आँख, समकालीन प्रकाशन, प्लैट नं-02, प्रथम तल, अंसारी मार्केट, दरियागंज, नई दिल्ली – 110002, प्रथम संस्करण-2022, पृष्ठ – 53.
9. वही, पृष्ठ – 67.
10. डॉ. जयप्रकाश कर्दम, तीसरी आँख, समकालीन प्रकाशन, प्लैट नं-02, प्रथम तल, अंसारी मार्केट, दरियागंज, नई दिल्ली – 110002, प्रथम संस्करण-2022, पृष्ठ – 102.
11. वही, पृष्ठ – 143.
12. जयप्रकाश कर्दम, तीसरी आँख, समकालीन प्रकाशन, प्लैट नं-02, प्रथम तल, अंसारी मार्केट, दरियागंज, नई दिल्ली – 110002, प्रथम संस्करण-2022, पृष्ठ – 150.

•